[2020] 3 उम. नि. प. 283

मंग्याकरसी

बनाम

एम. युवराज

[2020 की सिविल अपील सं. 1912-1913]

3 मार्च, 2020

न्यायमूर्ति (श्रीमती) आर. बानुमति, न्यायमूर्ति एस. अब्दुल नज़ीर और न्यायमूर्ति ए. एस. बोपन्ना

हिंदू विवाह अधिनियम, 1955 (1955 का 25) – धारा 13(1)(ia) और धारा 9 [सपठित सिविल प्रक्रिया संहिता, 1908 की धारा 100] – पति द्वारा पत्नी के उग्र और झगड़ालू स्वभाव के कारण क्रूरता के आधार पर विवाह-विच्छेद के लिए अर्जी फाइल किया जाना – पत्नी द्वारा दांपत्य अधिकारों के प्रत्यास्थापन के लिए अर्जी फाइल किया जाना – पत्नी का उग्र व्यवहार साबित न होना – पत्नी की अर्जी मंजूर किया जाना – पत्नी द्वारा पति के विरुद्ध आपराधिक शिकायत फाइल किया जाना – पति को दोषमुक्त किया जाना – पति द्वारा पुन: इस आधार पर विवाह-विच्छेद के लिए द्वितीय अपील फाइल किया जाना – विवाह-विच्छेद की अर्जी मंजूर किया जाना – जहां पति ने विवाह-विच्छेद के लिए अर्जी में पत्नी का उग्र और झगड़ालू स्वभाव का आधार लिया हो और वह अर्जी खारिज कर दी गई हो, तो पति के विरुद्ध पत्नी द्वारा दांडिक कार्यवाही फाइल करने के पश्चात्वर्ती आधार पर किए गए विवाह के विघटन को न्यायोचित नहीं कहा जा सकता है ।

हिंदू विवाह अधिनियम, 1955 (1955 का 25) – धारा 13(1)(ia) – विवाह-विच्छेद – विवाह का असुधार्य रूप से टूट जाने का अभिवाक् किया जाना – जहां पति और पत्नी दांपत्य जीवन की सामान्य कहा-सुनी के कारण लंबे समय से पृथक्-पृथक् रह रहे हों और उनकी एक बालिका भी हो तथा दांपत्य अधिकारों के प्रत्यास्थापन के लिए अर्जी मंजूर की गई हो, तो केवल लंबे समय से पृथक्-पृथक् रहने के आधार पर विवाह को विघटित नहीं किया जा सकता है ।

इस मामले के तथ्य इस प्रकार हैं कि प्रत्यर्थी-पति द्वारा अपनी पत्नी के उग्र और झगड़ालू स्वभाव के कारण क्रूरता के आधार पर विवाह के विघटन की ईप्सा करते हुए अर्जी फाइल की गई थी । दूसरी ओर, पत्नी ने दांपत्य अधिकारों के प्रत्यास्थापन के लिए अर्जी दी थी । विद्वान् अधीनस्थ न्यायाधीश, कोल्लाची ने तारीख 26 नवंबर, 2010 के निर्णय द्वारा पति द्वारा फाइल की गई अर्जी को खारिज कर दिया और पत्नी द्वारा फाइल की गई अर्जी मंजूर की गई । पति ने उक्त निर्णय से व्यथित होकर अपर जिला और सेशन न्यायाधीश, कोयंबटूर अर्थात् प्रथम अपील न्यायालय के समक्ष अपीलें फाइल कीं । प्रथम अपील न्यायालय ने मामले पर विचार करने के पश्चात् पति द्वारा फाइल की गई अपीलें खारिज कर दीं । इसलिए पति ने सिविल प्रक्रिया संहिता की धारा 100 के अधीन मद्रास उच्च न्यायालय के समक्ष द्वितीय अपील फाइल की । उच्च न्यायालय ने आक्षेपित निर्णय द्वारा अपीलें मंजूर कीं और दांपत्य अधिकारों के प्रत्यास्थापन के लिए आदेश को अपास्त कर दिया और इस मामले में पक्षकारों के बीच विवाह को विघटित कर दिया । पत्नी-अपीलार्थी द्वारा उच्च न्यायालय के निर्णय से व्यथित होकर उच्चतम न्यायालय में अपील फाइल की गई । उच्चतम न्यायालय द्वारा अपील मंजूर करते हुए,

अभिनिर्धारित – कागजातों का परिशीलन करने पर यह प्रकट होता है कि पति द्वारा विवाह के विघटन के लिए संस्थित की गई अर्जी इस अभिकथन के आधार पर थी कि पत्नी का व्यवहार उग्र है क्योंकि पड़ोसियों, मित्रों और आगंतुकों के साथ उसका व्यवहार झगड़ालू है । यह भी अभिकथन किया गया था कि वह पति के नियोजन के स्थान पर भी गई थी और उसे विद्यार्थियों और अन्य सहकर्मियों की मौजूदगी में नीचा दिखाया था । उक्त अभिकथनों की बाबत विचारण न्यायालय अभि. सा. 1 से अभि. सा. 4 के माध्यम से प्रस्तुत किए गए साक्ष्य पर विचार करने के पश्चात् इस निष्कर्ष पर पहुंचा था कि उक्त साक्ष्य अभिकथनों को, जो अर्जी में किए गए हैं, साबित करने के लिए पर्याप्त नहीं है । विचारण न्यायालय द्वारा पारित किए गए निर्णय के परिशीलन मात्र से यह उपदर्शित होता है कि अभिलेख पर उपलब्ध साक्ष्य को विस्तारपूर्वक निर्दिष्ट किया गया है और एक निष्कर्ष पर पहुंचा गया है । प्रथम

अपील न्यायालय ने भी उक्त साक्ष्य को निर्दिष्ट किया था, उसका पुनर्मूल्यांकन किया था और अपना निष्कर्ष निकाला था । ऐसी परिस्थिति में, वर्तमान प्रकृति की कार्यवाही में जहां विचारण न्यायालय ने साक्ष्य को निर्दिष्ट किया था और प्रथम अपील न्यायालय ने साक्ष्य का पुनर्मूल्यांकन करने के लिए अंतिम न्यायालय होने के नाते उक्त कवायद की थी और मामले पर एक समवर्ती निष्कर्ष पर पहुंचा था, वहां विधि की यह स्थिति भली-भांति स्थिर है कि न तो उच्च न्यायालय, जिसे सिविल प्रक्रिया संहिता की धारा 100 के अधीन किसी द्वितीय अपील में उसे सीमित गुंजाइश उपलब्ध है, साक्ष्य का पुनर्मूल्यांकन करने का हकदार है और न ही वर्तमान अपीलों में इस न्यायालय को ऐसा करना चाहिए । इसी बात को देखते हुए, हमने एक बार पुन: उस साक्ष्य को निर्दिष्ट नहीं किया है जो विचारण न्यायालय के समक्ष प्रस्तुत किया गया था और तद्नुसार जिसका विचारण न्यायालय द्वारा मूल्यांकन किया गया था । ऐसी स्थिति में, उच्च न्यायालय के पास विधि के सारभूत प्रश्न के आधार पर निष्कर्ष निकालने के लिए सीमित गुंजाइश थी । उच्च न्यायालय द्वारा विरचित किए गए विधि के सारभूत प्रश्नों को इस निर्णय के दौरान उद्धृत और उल्लिखित किया गया है । प्रारंभ में, विरचित किए गए प्रश्नों के परिशीलन मात्र से यह प्रकट होता है कि जब उस रीति पर विचार किया जाए जिसमें पक्षकारों ने विचारण न्यायालय के समक्ष कार्यवाही की थी तो विरचित किए गए प्रश्न विधि के सारभूत प्रश्नों के रूप में अर्हित नहीं होते हैं वास्तव में, विरचित किए गए प्रश्न साक्ष्य का पुनर्मूल्यांकन करने की गुंजाइश प्रदान करते हैं न कि विधि के सारभूत प्रश्नों के रूप में । जैसा कि उल्लेख किया गया है, प्रस्तुत तथ्यों में पति ने पहली बार विवाह के विघटन की ईप्सा करते हुए 2007 के एच. एम. ओ. पी सं. 65 में एक अर्जी फाइल की थी और उस अर्जी में पत्नी के बारे में यह अभिकथन किया गया था कि उसने नातेदारों और मित्रों की मौजूदगी में गंदी भाषा का प्रयोग किया था और पति के विद्यार्थियों की मौजूदगी में भी ऐसी गंदी भाषा का प्रयोग किया था । इसी आलोक में पति ने क्रूरता का अभिकथन किया था और इस आधार पर विवाह के विघटन की ईप्सा की थी । निस्संदेह यह सत्य है कि उक्त अर्जी जो आरंभ में फाइल की गई थी उस पर जोर नहीं दिया गया था, यद्यपि पक्षकारों की इस बाबत दलीलों में भेद है क्योंकि पति

की दलील यह है कि अर्जी पर इसलिए जोर नहीं दिया गया था चूंकि पत्नी ने आगे से समुचित व्यवहार करने का आश्वासन दिया था, जबकि पत्नी की दलील यह है कि उक्त कार्यवाहियां पति के माता-पिता के उकसाने पर आरंभ की गई थी और तद्नुसार उसके पश्चात् उन पर जोर नहीं दिया गया था । चाहे जो भी स्थिति हो, यद्यपि 2010 की एम. एम. ओ. पी. सं. 13 में पश्चात्वर्ती अर्जी पति द्वारा फाइल की गई थी, जिसे मूल रूप से 2007 की एच. एम. ओ. पी. सं. 532 के रूप में संख्यांकित किया गया था, वह भी इन्हीं अभिकथनों के आधार पर फाइल की गई थी । इसके अतिरिक्त, उसी सुसंगत समय पर पत्नी ने भी हिंदू विवाह अधिनियम की धारा 9 के अधीन एक अर्जी फाइल की थी । इस पृष्ठभूमि में, यद्यपि बाद में विचारण न्यायालय के समक्ष कार्यवाहियों में उन दांडिक कार्यवाहियों के प्रति निर्देश किया गया है जो उस तारीख को जब पति, जिसने विवाह के विघटन की ईप्सा करते हुए कार्यवाहियां आरंभ की थी, के लिए वाद हेतु उद्भूत हुआ था, तब उसके विरुद्ध फाइल किया गया आपराधिक मामला वह आधार नहीं था जिसके द्वारा ऐसी आपराधिक शिकायत फाइल करके मानसिक क्रूरता करने का आधार लिया गया था । यदि ऐसी स्थिति है, तो वह स्थिति जो विवाह के विघटन के लिए अर्जी का आरंभ करने का आधार नहीं थी और जब विचारण न्यायालय के समक्ष ऐसा मुद्दा भी नहीं था जिससे कि साक्ष्य दिया जा सके और एक विनिश्चय किया जाए, तब उच्च न्यायालय ने उस मुद्दे को विधि के सारभूत प्रश्न के रूप में उठाकर और इस बाबत अपना निष्कर्ष निकालकर न्यायोचित नहीं किया था । उच्च न्यायालय के निर्णय का परिशीलन करने पर यह उपदर्शित होता है कि ऐसे साक्ष्य के विषय में ऐसा कोई निर्देश नहीं है जिसके आधार पर विवाह के विघटन की ईप्सा की गई थी और जिसके लिए विचारण न्यायालय और प्रथम अपील न्यायालय द्वारा इनकार कर दिया गया था और क्या ऐसी बात से कोई विधि का सारभूत प्रश्न उत्पन्न हुआ था । अपितु संपूर्ण विचारणा उस निर्णय का अवलंब लेकर की गई थी जो दांडिक कार्यवाहियों में दिया गया था और विवाह का विघटन प्रदान किया था । प्रस्तुत मामले में जो विधि के सारभूत प्रश्न विरचित किए गए हैं और उनके आधार पर किए गए विनिश्चय के भाव को यदि अनुमोदित किया जाता है तो ऐसी स्थिति उत्पन्न होगी कि प्रत्येक मामले में यदि विवाह

के पक्षकारों में से किसी एक द्वारा कोई आपराधिक मामला फाइल किया जाता है और उसमें दोषमुक्ति हो जाती है तो यह विवाह-विच्छेद प्रदान करने के लिए स्वयमेव एक आधार के रूप में समझी जाएगी जो कि कानूनी उपबंध के विरुद्ध होगा । किसी समुचित मामले में यह संदेह नहीं किया जा सकता है कि दहेज की मांग के सिद्ध न किए गए अभिकथन या ऐसे अन्य अभिकथन किए गए हैं और पति तथा उसके परिवार के सदस्यों को दांडिक मुकदमेबाजी में घसीटा जाता है और अंततोगत्वा यदि यह पाया जाता है कि ऐसा अभिकथन अनावश्यक तथा निराधार है और यदि स्वयं पत्नी के ऐसे कृत्य से पति द्वारा यह अभिकथन करने का आधार बनता है कि उसके साथ मानसिक क्रूरता की गई है, तो निश्चित रूप से, ऐसी परिस्थिति में यदि उस आधार पर विवाह के विघटन के लिए अर्जी फाइल की जाती है और मानसिक क्रूरता का अभिकथन करने के लिए मूल न्यायालय के समक्ष साक्ष्य दिया जाता है तो उस आधार पर विवाह का विघटन करने के प्रयोजन के लिए भलीभांति मूल्यांकन किया जा सकता है । तथापि, प्रस्तुत तथ्यों में जैसा कि पहले भी उपदर्शित किया गया है, स्थिति ऐसी नहीं है । यद्यपि पत्नी द्वारा एक आपराधिक शिकायत दर्ज की गई थी और पति को उन कार्यवाहियों में दोषमुक्त कर दिया गया था तथा जिस आधार पर पति ने विचारण न्यायालय में समावेदन किया था वह आधार इस विषय में मानसिक क्रूरता का अभिकथन करते हुए नहीं था अपितु पत्नी के उग्र व्यवहार के विषय में था जिसके संबंध में दोनों निचले न्यायालयों ने साक्ष्य का मूल्यांकन करने के पश्चात् यह निष्कर्ष निकाला था कि अभिकथन साबित नहीं होता है । इस पृष्ठभूमि में यदि उच्च न्यायालय के निर्णय को ध्यान में रखा जाए तो इस न्यायालय की यह राय है कि उच्च न्यायालय ने अपना यह निष्कर्ष निकालकर न्यायोचित नहीं किया था । (पैरा 12, 13, 14 और 15)

प्रत्यर्थी की ओर से विद्वान् काउंसेल ने यह दलील दी कि वर्ष 2007 से लेकर पक्षकार मुकदमेबाजी कर रहे हैं और अलग-अलग रह रहे हैं । यह दलील दी गई कि इस स्थिति में विवाह असुधार्य रूप से टूट चुका है और इसलिए उच्च न्यायालय द्वारा जो विघटन मंजूर किया गया है उसे कायम रखा जाना चाहिए । यह न्यायालय किसी स्थिति में समुचित मामलों में

भारत के संविधान के अनुच्छेद 142 के अधीन शक्ति का प्रयोग कर सकता है तथापि, प्रस्तुत तथ्यों में हमारे द्वारा इस पहलू पर गंभीर विचार करने के पश्चात् हमने यह पाया है कि पक्षकार एक रूढ़िवादी पृष्ठभूमि से आते हैं जहां विवाह-विच्छेद एक वर्जित कर्म समझा जाता है और इसके अतिरिक्त उनकी तारीख 3 जनवरी, 2007 को पैदा हुई एक बालिका है जिसकी फिलहाल लगभग 13 वर्ष आयु है । ऐसे मामले में, जहां पक्षकारों के बीच मतभेद ज्यादा महत्व के नहीं हैं और वैवाहिक जीवन की प्रायिक कहा-सुनी की प्रकृति का है, बालिका के भविष्य और उसके भावी वैवाहिक जीवन को भी ध्यान में रखा जाना चाहिए और ऐसी परिस्थिति में केवल इस कारण विवाह का विघटना करना कि वे पिछले कुछ समय से मुकदमेबाजी कर रहे हैं तथा वे अलग-अलग रह रहे हैं, प्रस्तुत तथ्यों में न्यायोचित नहीं होगा, विशिष्ट रूप से जब साथ ही साथ दांपत्य अधिकारों के प्रत्यास्थापन पर भी विचार किया गया था । (पैरा 16 और 17)

निर्दिष्ट निर्णय

		पैरा
[2007]	(2007) 2 एस. सी. सी. 220 : **संघ मित्रा घोष** बनाम **काजल घोष** ;	16
[2007]	(2007) 4 एस. सी. सी. 511 : **समर घोष** बनाम **जया घोष** ;	16
[2006]	(2006) 4 एस. सी. सी. 558 : **नवीन कोहली** बनाम **नीलू कोहली** ।	16

अपीली (सिविल) अधिकारिता : 2020 की सिविल अपील सं. 1912-13.

2016 के सी. एम. एस. ए. सं. 23 और 24 में मद्रास उच्च न्यायालय के तारीख 20 जुलाई, 2018 के निर्णय के विरुद्ध अपील ।

अपीलार्थी की ओर से	सर्वश्री एस. नंदकुमार, (सुश्री) दीपिका नंदकुमार, एम. एस. सरन कुमार और नरेश कुमार
प्रत्यर्थी की ओर से	श्री बी. रघुनाथ, मैसर्स एन. सी. कविता और विजय कुमार

न्यायालय का निर्णय न्यायमूर्ति ए. एस. बोपन्ना ने दिया ।

न्या. बोपन्ना – इजाजत दी गई ।

2. अपीलार्थी ने इस न्यायालय के समक्ष 2016 के सी. एम. एस. ए. सं. 23 और 24 में मद्रास उच्च न्यायालय द्वारा तारीख 20 जुलाई, 2018 को पारित किए गए निर्णय को चुनौती दी है । अपीलार्थी, प्रत्यर्थी की पत्नी है । चूंकि विभिन्न कार्यवाहियों में पक्षकारों का क्रम भिन्न-भिन्न था क्योंकि दोनों पक्षकारों ने एक-दूसरे के विरुद्ध कार्यवाहियां आरंभ की थीं, इसलिए सुविधा की दृष्टि से और स्पष्टता के लिए इस अपील में अपीलार्थी को 'पत्नी' कहा जाएगा और इस अपील में प्रत्यर्थी को 'पति' कहा जाएगा, जहां कहीं संदर्भ के लिए ऐसा अपेक्षित हो ।

3. पति ने विवाह के विघटन की ईप्सा करते हुए हिंदू विवाह अधिनियम की धारा 13 के अधीन अर्जी दी थी । दूसरी ओर, पत्नी ने दांपत्य अधिकारों के प्रत्यास्थापन के लिए हिंदू विवाह अधिनियम की धारा 9 के अधीन अर्जी दी थी । अलग-अलग अर्जियों को, जो 2010 के एच. एम. ओ. पी. सं. 13 (पुराना संख्यांक 532/2007) और 2008 के एच. एम. ओ. पी. सं. 27 के रूप में रजिस्ट्रीकृत की गई थीं । एक-साथ मिलाया गया था और विद्वान् अधीनस्थ न्यायाधीश, कोल्लाची ने तारीख 26 नवंबर, 2010 के निर्णय द्वारा पति द्वारा फाइल की गई अर्जी को खारिज कर दिया था और पत्नी द्वारा फाइल की गई अर्जी मंजूर की गई थी । पति ने उक्त निर्णय से व्यथित होकर अपर जिला और सेशन न्यायाधीश, कोयंबटूर अर्थात् प्रथम अपील न्यायालय के समक्ष 2011 के सी. एम. ए. सं. 90 और 2011 के सी. एम. ए. सं. 71 में अपीलें फाइल कीं । प्रथम अपील न्यायालय ने मामले पर विचार करने के पश्चात् पति द्वारा फाइल की गई अपीलें खारिज कर दीं । इसलिए पति ने सिविल प्रक्रिया संहिता की धारा 100 के अधीन 2016 के सी. एम. एस. ए. सं. 23 और 24 में मद्रास उच्च न्यायालय के समक्ष द्वितीय अपील फाइल की । उच्च न्यायालय ने तारीख 20 जुलाई, 2018 के आक्षेपित निर्णय द्वारा अपीलें मंजूर कीं और दांपत्य अधिकारों के प्रत्यास्थापन के लिए आदेश को अपास्त कर दिया और इस मामले में पक्षकारों के बीच विवाह को विघटित कर दिया ।

4. अविवादग्रस्त स्थिति यह है कि पक्षकारों का विवाह 8 अप्रैल, 2005 को अनुष्ठापित हुआ था जो वास्तव में पक्षकारों का एक-दूसरे के

साथ हुए प्यार के पश्चात् हुआ था । प्रकथनों के अनुसार, पत्नी पति से छह से सात वर्ष बड़ी है । पक्षकारों की तारीख 3 जनवरी, 2007 को पैदा हुई एक बालिका भी है । विवाह के अस्तित्वशील रहने के दौरान पक्षकारों के बीच कई सारे मतभेद पैदा हुए थे । पति ने यह अभिकथन किया कि पत्नी झगड़ालु स्वभाव की है और नातेदारों और मित्रों की मौजूदगी में गंदी भाषा का प्रयोग करती है और यह भी कि वह उस महाविद्यालय में गई जहां पति नियोजित था और विद्यार्थियों की मौजूदगी में गंदी भाषा का प्रयोग किया जिससे उसका अपमान हुआ । अत: पति ने यह दावा करते हुए कि वह एक सम्माननीय परिवार से संबंध रखता है और पत्नी के ऐसे व्यवहार को सहन नहीं कर सकता है, तारीख 7 दिसंबर, 2006 को एक विधिक सूचना भिजवाई जिसका पत्नी द्वारा उत्तर नहीं दिया गया । इसलिए पति ने विवाह के विघटन की ईप्सा करते हुए 2007 के एच. एम. ओ. पी. सं. 65 में हिंदू विवाह अधिनियम की धारा 13 के अधीन एक अर्जी फाइल की । पति ने यह दलील दी कि पत्नी विचारण न्यायालय के समक्ष उपसंजात हुई थी और एक सामान्य विवाहित जीवन जीने के उसके द्वारा दिए गए आश्वासन पर अर्जी पर आगे जोर नहीं दिया गया था । पति का यह अभिकथन है कि उसके पश्चात् मात्र लगभग पांच दिनों के बाद पत्नी महाविद्यालय गई और उसके साथ गाली-गलौच की तथा तारीख 12 अप्रैल, 2007 को दांपत्य गृह भी छोड़ दिया । इस पृष्ठभूमि में इन्हीं अभिकथनों के आधार पर जो पहली बार किए गए थे, 2010 के एच. एम. ओ. पी. सं. 13 (पुराना संख्याक 532/2007) में विवाह के विघटन की ईप्सा करते हुए अर्जी फाइल की गई थी ।

5. पत्नी, जो उपसंजात हुई और आक्षेप कथन फाइल किया, ने पति के अभिकथनों को विवादग्रस्त किया । विवाह के समय पर पति की अर्हता और उसके नियोजन से संबंधित तथ्यात्मक पहलुओं को भी विवादग्रस्त किया गया । उसके द्वारा यह दलील दी गई कि विवाह के पश्चात् वे वर्ष 2005 तक सथियामंगलम में एक-साथ रहे और उसके पश्चात् दिसंबर, 2006 तक सारावनमपट्टी में रहे । यह दलील दी गई कि पति के माता-पिता के गृह-नगर और उल्लिखित उक्त स्थानों के बीच दूरी 120 किलो मीटर से ज्यादा है और उक्त दूरी की यात्रा करना

मुश्किल था । इसलिए उनका अपमान करने का अभिकथन सत्य नहीं है । तत्पश्चात्, जब पति और उसके माता-पिता के बीच संबंध सौहार्दपूर्ण थे और एक-साथ रह रहे थे, यह दावा किया गया है कि पत्नी ने नातेदारों और आगंतुकों के साथ सही बर्ताव किया था । अत: उसका रूखा व्यवहार होने के बारे में अभिकथन विवादग्रस्त है । पति द्वारा तारीख 7 दिसंबर, 2006 को जारी की गई विधिक सूचना के संबंध में यह दलील दी गई कि गर्भावस्था के दौरान पति ने उसे यह कहा था कि उसके माता-पिता विधिक सूचना जारी करने की बात पर जोर दे रहे हैं और पति का वह अभिप्राय नहीं है जो इसमें उपदर्शित किया गया है । उसके पश्चात् लगभग 25 दिनों के भीतर पत्नी ने एक बालिका को जन्म दिया था और यहां तक कि 2007 की एच. एम. ओ. पी. सं. 65 में पूर्ववर्ती अर्जी की बाबत भी वह उपसंजात हुई थी और उसके साथ रहने की अपनी तत्परता के बारे में इच्छा जाहिर की थी और उसने यह असंदिग्ध रूप से किया था । उक्त मामला कथित रूप से पति के माता-पिता के उकसावे पर किया गया था । इस आलोक में, पत्नी ने अभिकथनों से इनकार किया और अर्जी को खारिज करने की ईप्सा की ।

6. पत्नी द्वारा दांपत्य अधिकारों के प्रत्यास्थापन की ईप्सा करते हुए हिंदू विवाह अधिनियम की धारा 9 के अधीन फाइल की गई अर्जी में उसने उस रीति का उल्लेख किया था जिस रीति में विवाह हुआ था और यह उपदर्शित किया था कि वे विधिमान्य कारणों के बिना अलग-अलग रह रहे हैं और इसलिए अनुतोष की ईप्सा की थी । पति उपसंजात हुआ था और आक्षेप कथन फाइल किया गया था जिसमें उसने पक्षकारों के अलग-अलग समुदाय के होने और आयु में अंतर होने का भी उल्लेख किया था । अर्जी में किए गए और प्रकथनों से इनकार किया गया था । पति ने पत्नी द्वारा नेगामम पुलिस थाने में अपराध सं. 401/2007 में फाइल की गई शिकायत का भी उल्लेख किया जिसमें पति को पुलिस द्वारा गिरफ्तार किया गया था और सात दिनों के लिए न्यायिक अभिरक्षा में रहा था । इस आलोक में, यह दलील दी गई कि पक्षकारों के बीच विवाह उस सीमा तक टूट चुका है जहां से वापस आना कठिन है, इसलिए अर्जी को खारिज करने की ईप्सा की ।

7. विचारण न्यायालय ने परस्पर-विरोधी दलीलों के आधार पर

विवाद्यक विरचित किए । पति ने स्वयं की और साक्षियों की अभि. सा. 1 से अभि. सा. 4 के रूप में परीक्षा कराई और ए-1 से ए-5 दस्तावेज प्रदर्शित किए, जबकि पत्नी ने स्वयं की और साक्षियों की आर. डब्ल्यू. 1 से आर. डब्ल्यू. 3 के रूप में परीक्षा कराई और आर-1 से आर-3 के रूप में दस्तावेज प्रदर्शित किए । विचारण न्यायालय ने प्रस्तुत किए गए साक्ष्य को निर्दिष्ट करने के पश्चात् अर्जी को खारिज कर दिया । विचारण न्यायालय ने ऐसा करते हुए उस साक्ष्य को विस्तार से निर्दिष्ट किया जो प्रस्तुत किया गया था और इस आलोक में जहां तक अभिकथनों का संबंध है, विचारण न्यायालय की यह राय थी कि पति ने किसी साक्षी की यह साबित करने के लिए परीक्षा नहीं कराई है कि विवाह के 15 माह के पश्चात् उनके बीच झगड़ा होना आरंभ हो गया था और उसे पड़ोसियों के साथ पत्नी के झगड़ालू स्वभाव के कारण लगभग सात मकान बदलने पड़े थे । यह भी मत व्यक्त किया गया कि उन साक्षियों के साक्ष्य से, जिनकी परीक्षा की गई है, इस अभिकथन से मेल नहीं खाता है कि पत्नी ने विद्यार्थियों और सहकर्मियों के सामने पति के साथ गाली-गलौज की थी । इस आलोक में, विचारण न्यायालय ने यह पाया कि अभि. सा. 1 के रूप में पति द्वारा किया गया अभिकथन और उन नातेदारों, जिनकी साक्षियों (अभि. सा. 2 और अभि. सा. 3) के रूप में परीक्षा की गई थी, का यह अभिकथन था कि पत्नी अपने माता-पिता के घर ठाठ-बाट का जीवन जीती थी । इस आलोक में, विचारण न्यायालय ने उस रीति को ध्यान में रखते हुए जिसमें पक्षकारों के बीच विवाह हुआ था और इस बात पर भी विचार करने के पश्चात् कि इस विवाह-बंधन से तारीख 3 जनवरी, 2007 को एक बालिका का जन्म हुआ था, यह राय बनाई कि विवाह-विच्छेद की ईप्सा करने वाली अर्जी पति के माता-पिता के उकसावे पर फाइल की गई थी और विवाह-विच्छेद प्रदान करने के लिए कोई वास्तविक कारण नहीं है ।

8. प्रथम अपील न्यायालय ने पति द्वारा फाइल की गई अपीलों पर विचार करते हुए उस साक्ष्य पर विचार किया जो विचारण न्यायालय के समक्ष निर्दिष्ट किया गया था और उसके आलोक में मामले का पुनर्मूल्यांकन करने के पश्चात् विचारण न्यायालय के निर्णय को कायम रखा था ।

9. उच्च न्यायालय के समक्ष फाइल की गई द्वितीय अपील में विचार

के लिए विधि के निम्नलिखित सारभूत प्रश्न विरचित किए गए थे :–

"1. क्या निचले न्यायालयों ने अपीलार्थी और प्रत्यर्थी के विवाह को मानसिक क्रूरता के आधार पर (जब विशिष्ट रूप से प्रत्यर्थी द्वारा अपीलार्थी और अपने ससुराल वालों के विरुद्ध दहेज हेतु तंग करने के लिए तारीख 24 नवंबर, 2017 को दर्ज की गई अभिकथित शिकायत और पुलिस द्वारा की गई परिणामी गिरफ्तारी से हिंदू विवाह अधिनियम की धारा 13(1)(ia) में यथा परिकल्पित क्रूरता का असंदिग्ध रूप से गठन होता है) विघटन न करके सही और न्यायोचित किया है ?

2. क्या प्रत्यर्थी-पत्नी द्वारा अपीलार्थी और अपने ससुराल वालों के विरुद्ध दहेज हेतु तंग करने के लिए मिथ्या आपराधिक शिकायत दर्ज करने के संबंध में पश्चात्वर्ती घटना की अनदेखी करके विवाह-विच्छेद की अर्जी को खारिज करने वाले निचले न्यायालयों के निर्णय विधि के अनुसार संधार्य हैं ?

3. क्या निचले न्यायालयों के निर्णय सही और न्यायोचित हैं जब विशिष्ट रूप से न्यायिक मजिस्ट्रेट सं. 2, कोल्लाची की फाइल पर दहेज के लिए तंग करने हेतु 2008 के आपराधिक मामला सं. 149 में आरंभ किए गए दांडिक अभियोजन का समापन सम्मानजनक दोषमुक्ति के रूप में हुआ था ?

4. क्या निचले न्यायालयों के निर्णय अनुचित हैं ?"

10. यही वह पृष्ठभूमि है जिसमें उच्च न्यायालय इस निष्कर्ष पर पहुंचा था कि पत्नी द्वारा यह अभिकथन करते हुए फाइल किया गया आपराधिक मामला, जो 2008 के आपराधिक मामला सं. 8 के रूप में अग्रसर हुआ था, कि पति ने दहेज की मांग की थी और उक्त कार्यवाहियों में जब साक्ष्य के अभाव में यह अभिकथन मिथ्या पाया गया है तो यह हिंदू विवाह अधिनियम की धारा 13(1)(ia) के अधीन यथा अनुध्यात मानसिक क्रूरता का कृत्य होगा और इसी आलोक में अपील मंजूर की थी ।

11. अपीलार्थी-पत्नी की ओर से विद्वान् काउंसेल श्री एस. नंदकुमार और प्रत्यर्थी-पति की ओर से विद्वान् काउंसेल श्री बी. रघुनाथ को सुना तथा अपील के कागजातों का परिशीलन किया ।

12. विद्वान् काउंसेलों द्वारा दी गई दलीलों को ध्यान में रखते हुए, कागजातों का परिशीलन करने पर यह प्रकट होता है कि पति द्वारा विवाह के विघटन के लिए संस्थित की गई अर्जी इस अभिकथन के आधार पर थी कि पत्नी का व्यवहार उग्र है क्योंकि पड़ोसियों, मित्रों और आगंतुकों के साथ उसका व्यवहार झगड़ालू है । यह भी अभिकथन किया गया था कि वह पति के नियोजन के स्थान पर भी गई थी और उसे विद्यार्थियों और अन्य सहकर्मियों की मौजूदगी में नीचा दिखाया था । उक्त अभिकथनों की बाबत विचारण न्यायालय अभि. सा. 1 से अभि. सा. 4 के माध्यम से प्रस्तुत किए गए साक्ष्य पर विचार करने के पश्चात् इस निष्कर्ष पर पहुंचा था कि उक्त साक्ष्य अभिकथनों को, जो अर्जी में किए गए हैं, साबित करने के लिए पर्याप्त नहीं है । विचारण न्यायालय द्वारा पारित किए गए निर्णय के परिशीलन मात्र से यह उपदर्शित होता है कि अभिलेख पर उपलब्ध साक्ष्य को विस्तारपूर्वक निर्दिष्ट किया गया है और एक निष्कर्ष पर पहुंचा गया है । प्रथम अपील न्यायालय ने भी उक्त साक्ष्य को निर्दिष्ट किया था, उसका पुनर्मूल्यांकन किया था और अपना निष्कर्ष निकाला था । ऐसी परिस्थिति में, वर्तमान प्रकृति की कार्यवाही में जहां विचारण न्यायालय ने साक्ष्य को निर्दिष्ट किया था और प्रथम अपील न्यायालय ने साक्ष्य का पुनर्मूल्यांकन करने के लिए अंतिम न्यायालय होने के नाते उक्त कवायद की थी और मामले पर एक समवर्ती निष्कर्ष पर पहुंचा था, वहां विधि की यह स्थिति भली-भांति स्थिर है कि न तो उच्च न्यायालय, जिसे सिविल प्रक्रिया संहिता की धारा 100 के अधीन किसी द्वितीय अपील में उसे सीमित गुंजाइश उपलब्ध है, साक्ष्य का पुनर्मूल्यांकन करने का हकदार है और न ही वर्तमान अपीलों में इस न्यायालय को ऐसा करना चाहिए ।

13. इसी बात को देखते हुए, हमने एक बार पुन: उस साक्ष्य को निर्दिष्ट नहीं किया है जो विचारण न्यायालय के समक्ष प्रस्तुत किया गया था और तद्नुसार जिसका विचारण न्यायालय द्वारा मूल्यांकन किया गया था । ऐसी स्थिति में, उच्च न्यायालय के पास विधि के सारभूत प्रश्न के आधार पर निष्कर्ष निकालने के लिए सीमित गुंजाइश थी । उच्च न्यायालय द्वारा विरचित किए गए विधि के सारभूत प्रश्नों को इस निर्णय के दौरान उद्धृत और उल्लिखित किया गया है । प्रारंभ

में, विरचित किए गए प्रश्नों के परिशीलन मात्र से यह प्रकट होता है कि जब उस रीति पर विचार किया जाए जिसमें पक्षकारों ने विचारण न्यायालय के समक्ष कार्यवाही की थी तो विरचित किए गए प्रश्न विधि के सारभूत प्रश्नों के रूप में अर्हित नहीं होते हैं वास्तव में, विरचित किए गए प्रश्न साक्ष्य का पुनर्मूल्यांकन करने की गुंजाइश प्रदान करते हैं न कि विधि के सारभूत प्रश्नों के रूप में । जैसा कि उल्लेख किया गया है, प्रस्तुत तथ्यों में पति ने पहली बार विवाह के विघटन की ईप्सा करते हुए 2007 के एच. एम. ओ. पी. सं. 65 में एक अर्जी फाइल की थी और उस अर्जी में पत्नी के बारे में यह अभिकथन किया गया था कि उसने नातेदारों और मित्रों की मौजूदगी में गंदी भाषा का प्रयोग किया था और पति के विद्यार्थियों की मौजूदगी में भी ऐसी गंदी भाषा का प्रयोग किया था । इसी आलोक में पति ने क्रूरता का अभिकथन किया था और इस आधार पर विवाह के विघटन की ईप्सा की थी । निस्संदेह यह सत्य है कि उक्त अर्जी जो आरंभ में फाइल की गई थी उस पर जोर नहीं दिया गया था, यद्यपि पक्षकारों की इस बाबत दलीलों में भेद है क्योंकि पति की दलील यह है कि अर्जी पर इसलिए जोर नहीं दिया गया था चूंकि पत्नी ने आगे से समुचित व्यवहार करने का आश्वासन दिया था, जबकि पत्नी की दलील यह है कि उक्त कार्यवाहियां पति के माता-पिता के उकसाने पर आरंभ की गई थी और तद्नुसार उसके पश्चात् उन पर जोर नहीं दिया गया था ।

14. चाहे जो भी स्थिति हो, यद्यपि 2010 की एच. एम. ओ. पी. सं. 13 में पश्चात्वर्ती अर्जी पति द्वारा फाइल की गई थी, जिसे मूल रूप से 2007 की एच. एम. ओ. पी. सं. 532 के रूप में संख्यांकित किया गया था, वह भी इन्हीं अभिकथनों के आधार पर फाइल की गई थी । इसके अतिरिक्त, उसी सुसंगत समय पर पत्नी ने भी हिंदू विवाह अधिनियम की धारा 9 के अधीन एक अर्जी फाइल की थी । इस पृष्ठभूमि में, यद्यपि बाद में विचारण न्यायालय के समक्ष कार्यवाहियों में उन दांडिक कार्यवाहियों के प्रति निर्देश किया गया है जो उस तारीख को जब पति, जिसने विवाह के विघटन की ईप्सा करते हुए कार्यवाहियां आरंभ की थीं, के लिए वाद हेतु उद्भूत हुआ था, तब उसके विरुद्ध फाइल किया गया आपराधिक मामला वह आधार नहीं था जिसके द्वारा ऐसी

आपराधिक शिकायत फाइल करके मानसिक क्रूरता करने का आधार लिया गया था । यदि ऐसी स्थिति है, तो वह स्थिति जो विवाह के विघटन के लिए अर्जी का आरंभ करने का आधार नहीं थी और जब विचारण न्यायालय के समक्ष ऐसा मुद्दा भी नहीं था जिससे कि साक्ष्य दिया जा सके और एक विनिश्चय किया जाए, तब उच्च न्यायालय ने उस मुद्दे को विधि के सारभूत प्रश्न के रूप में उठाकर और इस बाबत अपना निष्कर्ष निकालकर न्यायोचित नहीं किया था । उच्च न्यायालय के निर्णय का परिशीलन करने पर यह उपदर्शित होता है कि ऐसे साक्ष्य के विषय में ऐसा कोई निर्देश नहीं है जिसके आधार पर विवाह के विघटन की ईप्सा की गई थी और जिसके लिए विचारण न्यायालय और प्रथम अपील न्यायालय द्वारा इनकार कर दिया गया था और क्या ऐसी बात से कोई विधि का सारभूत प्रश्न उत्पन्न हुआ था । अपितु संपूर्ण विचारण उस निर्णय का अवलंब लेकर की गई थी जो दांडिक कार्यवाहियों में दिया गया था और विवाह का विघटन प्रदान किया था । प्रस्तुत मामले में जो विधि के सारभूत प्रश्न विरचित किए गए हैं और उनके आधार पर किए गए विनिश्चय के भाव को यदि अनुमोदित किया जाता है तो ऐसी स्थिति उत्पन्न होगी कि प्रत्येक मामले में यदि विवाह के पक्षकारों में से किसी एक द्वारा कोई आपराधिक मामला फाइल किया जाता है और उसमें दोषमुक्ति हो जाती है तो यह विवाह-विच्छेद प्रदान करने के लिए स्वयमेव एक आधार के रूप में समझी जाएगी जो कि कानूनी उपबंध के विरुद्ध होगा ।

15. किसी समुचित मामले में यह संदेह नहीं किया जा सकता है कि दहेज की मांग के सिद्ध न किए गए अभिकथन या ऐसे अन्य अभिकथन किए गए हैं और पति तथा उसके परिवार के सदस्यों को दांडिक मुकदमेबाजी में घसीटा जाता है और अंततोगत्वा यदि यह पाया जाता है कि ऐसा अभिकथन अनावश्यक तथा निराधार है और यदि स्वयं पत्नी के ऐसे कृत्य से पति द्वारा यह अभिकथन करने का आधार बनता है कि उसके साथ मानसिक क्रूरता की गई है, तो निश्चित रूप से, ऐसी परिस्थिति में यदि उस आधार पर विवाह के विघटन के लिए अर्जी फाइल की जाती है और मानसिक क्रूरता का अभिकथन करने के लिए मूल न्यायालय के समक्ष साक्ष्य दिया जाता है तो उस आधार पर विवाह

का विघटन करने के प्रयोजन के लिए भली-भांति मूल्यांकन किया जा सकता है । तथापि, प्रस्तुत तथ्यों में जैसा कि पहले भी उपदर्शित किया गया है, स्थिति ऐसी नहीं है । यद्यपि पत्नी द्वारा एक आपराधिक शिकायत दर्ज की गई थी और पति को उन कार्यवाहियों में दोषमुक्त कर दिया गया था तथा जिस आधार पर पति ने विचारण न्यायालय में समावेदन किया था वह आधार इस विषय में मानसिक क्रूरता का अभिकथन करते हुए नहीं था अपितु पत्नी के उग्र व्यवहार के विषय में था जिसके संबंध में दोनों निचले न्यायालयों ने साक्ष्य का मूल्यांकन करने के पश्चात् यह निष्कर्ष निकाला था कि अभिकथन साबित नहीं होता है । इस पृष्ठभूमि में यदि उच्च न्यायालय के निर्णय को ध्यान में रखा जाए तो हमारी यह राय है कि उच्च न्यायालय ने अपना यह निष्कर्ष निकालकर न्यायोचित नहीं किया था ।

16. तथापि, प्रत्यर्थी की ओर से विद्वान् काउंसेल ने यह दलील दी कि वर्ष 2007 से लेकर पक्षकार मुकदमेबाजी कर रहे हैं और अलग-अलग रह रहे हैं । यह दलील दी गई कि इस स्थिति में विवाह असुधार्य रूप से टूट चुका है और इसलिए उच्च न्यायालय द्वारा जो विघटन मंजूर किया गया है उसे कायम रखा जाना चाहिए । विद्वान् काउंसेल ने **नवीन कोहली** बनाम **नीलू कोहली**[1], **संघ मित्रा घोष** बनाम **काजल घोष**[2] और **समर घोष** बनाम **जया घोष**[3] वाले मामलों में के विनिश्चयों का यह दलील देने के लिए अवलंब लिया कि ऐसे मामलों में जहां लंबे समय से लगातार पृथक्करण रहा हो और विवाह एक कल्पना बन कर रह जाता है, वहां ऐसे विवाह का विघटन करना उचित होगा । प्रतिपादित की गई विधि की इस स्थिति पर विस्तार से विचार करना आवश्यक नहीं है क्योंकि उपलब्ध आधारों से अतिरिक्त आधारों पर विवाह के विघटन का विनिश्चय मामला-दर-मामला के आधार पर किया जाना होगा और कोई नियमनिष्ठ सिद्धांत नहीं हो सकता है । यह न्यायालय किसी स्थिति में समुचित मामलों में भारत के संविधान के अनुच्छेद 142 के अधीन शक्ति का प्रयोग कर सकता है तथापि, प्रस्तुत तथ्यों में हमारे द्वारा

---

[1] (2006) 4 एस. सी. सी. 558.

[2] (2007) 2 एस. सी. सी. 220.

[3] (2007) 4 एस. सी. सी. 511.

इस पहलू पर गंभीर विचार करने के पश्चात् हमने यह पाया है कि पक्षकार एक रूढ़िवादी पृष्ठभूमि से आते हैं जहां विवाह-विच्छेद एक वर्जित कर्म समझा जाता है और इसके अतिरिक्त उनकी तारीख 3 जनवरी, 2007 को पैदा हुई एक बालिका है जिसकी फिलहाल लगभग 13 वर्ष आयु है । ऐसे मामले में, जहां पक्षकारों के बीच मतभेद ज्यादा महत्व के नहीं हैं और वैवाहिक जीवन की प्रायिक कहासुनी की प्रकृति का है, बालिका के भविष्य और उसके भावी वैवाहिक जीवन को भी ध्यान में रखा जाना चाहिए और ऐसी परिस्थिति में केवल इस कारण विवाह का विघटन करना कि वे पिछले कुछ समय से मुकदमेबाजी कर रहे हैं तथा वे अलग-अलग रह रहे हैं, प्रस्तुत तथ्यों में न्यायोचित नहीं होगा, विशिष्ट रूप से जब साथ ही साथ दांपत्य अधिकारों के प्रत्यास्थापन पर भी विचार किया गया था ।

17. इस दृष्टि से, इस निष्कर्ष पर पहुंचने के पश्चात् कि उच्च न्यायालय द्वारा विरचित किए गए विधि के सारभूत प्रश्नों की प्रकृति ही न्यायोचित नहीं है और निकाला गया निष्कर्ष भी संधार्य नहीं है, उच्च न्यायालय का निर्णय अपास्त करने योग्य है ।

18. परिणामतः, 2016 के सी. एम. एस. ए. संख्या 23 और 24 में तारीख 20 जुलाई, 2018 को पारित किया गया निर्णय अपास्त किया जाता है । 2010 के एच. एम. ओ. पी. सं. 13 और 2008 के एच. एम. ओ. पी. सं. 27 में तारीख 26 नवंबर, 2010 को पारित किया गया निर्णय, जिसकी अभिपुष्टि 2011 के सी. एम. ए. सं. 90 और 2011 के सी. एम. एस. ए. सं. 71 में की गई है, प्रत्यावर्तित किए जाते हैं । तद्नुसार, ये अपीलें मंजूर की जाती हैं और खर्चे के बारे में कोई आदेश नहीं किया जाता है ।

19. लंबित आवेदन, यदि कोई है, का भी निपटारा हो जाएगा ।

अपीलें मंजूर की गईं ।

जस.